|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 2: सांख्ययोग

2/6 (श्लोक 11-24), रविवार, 19 नवंबर 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/bptNAwvlFAU

आत्मा की अमरता!

गीता-गीत, हनुमान चालीसा, प्रार्थना, सभी देवताओं और गुरुजन को प्रणाम करके व दीप प्रज्वलन के उपरान्त, गीता पारायण की जानकारी देते हुए, आज का सत्र प्रारम्भ हुआ। आज अहमदाबाद में भारत और आस्ट्रेलिया के मध्य विश्वकप क्रिकेट भी युद्ध है और एक युद्ध महाभारत के रण में।

सभी उपस्थित लोगों का विशेष स्वागत है, क्योंकि साधक क्रिकेट का मोह त्याग कर, टी वी को छोड़ कर गीता का विवेचन सुनने को प्रस्तुत हुए हैं इसलिए आज उपस्थित साधक विशेष रूप से प्रणाम के योग्य हैं। पिछले सत्र में हम ने देखा कि अर्जुन विषाद ग्रस्त होकर, भगवान से कह रहे हैं कि मैं युद्ध नहीं लड़ना चाहता। अपने गुरुजन, रिश्तेदारों और पितामह को मारकर, उनका संहार करके यह राज्य मुझे मिलता है तो वह व्यर्थ है।

वे कहते हैं-

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा॥ 1:32॥

यह राज्य मुझे नहीं चाहिए, मैं अपना जीवन भी समाप्त करना चाहता हूँ। वे कहते हैं कि यदि मेरे मरने से यह नरसंहार रुक सकता है तो मैं मरने को तत्पर हूँ। एक प्रकार से वे आत्महत्या करने को अग्रसर हैं। युद्ध से सारे परिवार का विनाश हो जायेगा, इस विचार से अर्जुन मोहग्रस्त हैं। वे अपने कर्त्तव्य से विमुख होकर ऐसा कह रहे हैं। वे रोते हुए भगवान की शरण में आ गये हैं। अपने रथ की बागडोर तो पहले ही भगवान को सौंपी हुई थी, अब अपने जीवन की डोर भी भगवान को सौंप दी।

वे भगवान से कहते हैं - **मेरे लिए क्या श्रेयस्कर है? आप ही बताइए।** ऐसे कहते हुए अर्जुन भगवान से अनेक प्रश्न करते ही जा रहे थे। अर्जुन शङ्कित और मोहग्रस्त हैं इसलिए द्वितीय अध्याय बहुत सुन्दर है। श्रीमद्भगवद्गीता का सार इस अध्याय में है। कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि रणाङ्गण में प्रभु ने केवल दूसरा अध्याय ही कहा है। अन्य अध्यायों में वेदव्यास जी द्वारा किया गया विस्तार है, परन्तु ऐसा नहीं है। शिक्षा देने का यही उपाय है, कि पहले सारी बात सङ्क्षेप में कही जाती है, फिर उसका विस्तार किया जाता है। अन्त में फिर सङ्क्षिप्त पुनरावृत्ति की जाती है। हम गीता में ऐसा ही देखते हैं। ऐसा नहीं कि अर्जुन को उसी दिन पता चला हो कि मुझे भीष्म पितामह और अपने बन्धु बाँधवों से लड़ना है। दोनों सेनाओं के मध्य रथ ले जाने के बाद भगवान

हँसने लगे। पिछले सत्र में भी हमने देखा कि भगवान ने एक तरह से अर्जुन को डांट भी लगाई।

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन॥ 2:02॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप॥ 2:03॥

भगवान ने कहा कि इस तरह की बात तुम्हें शोभा नहीं देती। उन्होंने अर्जुन को डांटते हुए कहा कि तुम नपुंसक हो, जो ऐसी बात कर रहे हो। वीर योद्धा को नपुंसक कहा जाए तो उस योद्धा का बहुत अपमान होता है। आगे सञ्जय ने समझाया कि भगवान यह बात हँसते हुए कह रहे थे।

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः॥ 2:10॥

भगवान प्रसन्नचित्त होकर अर्जुन से कह रहे हैं- कितना भी कष्ट आ जाए! कैसी भी परिस्थिति हो! हमारे मन से प्रसन्नता नहीं छूटनी चाहिए। भगवान ने ऐसा सिद्ध भी कर दिया। कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाए, जो सदा हँसता रहे, ऐसा बहुत कम देखने में आता है।

एक दृष्टान्त है- विवेचक अपनी पत्नी के साथ हवाई यात्रा कर रहे थे। उन्होंने हवाई जहाज में मुस्कुराती हुई परिचारिका को देखा। उन्हें लगा सम्भवतः यह हर हाल में मुस्कुराती हैं, परन्तु परिचारिका अन्दर से नहीं मुस्कुरा रही थीं। उसे तो मुस्कुराने का प्रशिक्षण दिया है। हम जो गीता के अनुयायी हैं, यदि हम यह अपने जीवन में उतार लें और कैसी भी विषम परिस्थिति हो, हम सदैव मुस्कुराते रहें। जीवन में कितनी भी कठिनाई आए, हमारे मुख-मण्डल पर मुस्कान बनी रहे।

युद्ध रोकने का भरसक प्रयत्न किया गया था। भगवान स्वयं हस्तिनापुर गए थे। उन्होंने दुर्योधन को समझाया कि तुम मेरे मित्र हो। मेरे कहने से तुम पाण्डवों को आधा राज्य दे दो। यदि आधा राज्य भी नहीं देना चाहते हो तो सिर्फ पाँच गाँव दे दो। दुर्योधन ने कह दिया युद्ध के बिना तो वह उन्हें एक सुई के नोक के बराबर भी जमीन नहीं देगा। इस प्रसङ्ग पर रामधारी सिंह दिनकर ने एक बहुत सुन्दर कविता लिखी है।

वर्षों तक वन में घूम-घूम,
बाधा-विघ्नों को चूम-चूम,
सह धूप-घाम, पानी-पत्थर,
पाण्डव आये कुछ और निखर।
सौभाग्य न सब दिन सोता है,
देखें, आगे क्या होता है।

मैत्री की राह बताने को,
सबको सुमार्ग पर लाने को,
दुर्योधन को समझाने को,
भीषण विध्वंस बचाने को,
भगवान् हस्तिनापुर आये,
पाण्डव का संदेशा लाये।

‘दो न्याय अगर तो आधा दो,
पर, इसमें भी यदि बाधा हो,

तो दे दो केवल पाँच ग्राम,
रक्खो अपनी धरती तमाम।
हम वहीं खुशी से खायेंगे,
परिजन पर असि न उठायेंगे!

दुर्योधन वह भी दे न सका,
आशीष समाज की ले न सका,
उलटे, हरि को बाँधने चला,
जो था असाध्य, साधने चला।
जब नाश मनुज पर छाता है,
पहले विवेक मर जाता है।

हरि ने भीषण हुङ्कार किया,
अपना स्वरूप-विस्तार किया,
डगमग-डगमग दिग्गज डोले,
भगवान् कुपित होकर बोले-
'जञ्जीर बढ़ा कर साध मुझे,
हाँ, हाँ दुर्योधन! बाँध मुझे।

यह देख, गगन मुझमें लय है,
यह देख, पवन मुझमें लय है,
मुझमें विलीन झङ्कार सकल,
मुझमें लय है संसार सकल।
अमरत्व फूलता है मुझमें,
संहार झूलता है मुझमें।

'उदयाचल मेरा दीप्त भाल,
भूमण्डल वक्षस्थल विशाल,
भुज परिधि-बन्ध को घेरे हैं,
मैनाक-मेरु पग मेरे हैं।
दिपते जो ग्रह नक्षत्र निकर,
सब हैं मेरे मुख के अन्दर।

'दृग हों तो दृश्य अकाण्ड देख,
मुझमें सारा ब्रह्माण्ड देख,
चर-अचर जीव, जग, क्षर-अक्षर,
नश्वर मनुष्य सुरजाति अमर।
शत कोटि सूर्य, शत कोटि चन्द्र,
शत कोटि सरित, सर, सिन्धु मन्द्र।

'शत कोटि विष्णु, ब्रह्मा, महेश,
शत कोटि जिष्णु, जलपति, धनेश,
शत कोटि रुद्र, शत कोटि काल,
शत कोटि दण्डधर लोकपाल।
जञ्जीर बढ़ाकर साध इन्हें,

हाँ-हाँ दुर्योधन! बाँध इन्हें।

‘भूलोक, अतल, पाताल देख,
गत और अनागत काल देख,
यह देख जगत का आदि-सृजन,
यह देख, महाभारत का रण,
मृतकों से पटी हुई भू है,
पहचान, इसमें कहाँ तू है।

‘अम्बर में कुन्तल-जाल देख,
पद के नीचे पाताल देख,
मुट्ठी में तीनों काल देख,
मेरा स्वरूप विकराल देख।
सब जन्म मुझी से पाते हैं,
फिर लौट मुझी में आते हैं।

‘जिह्वा से कढ़ती ज्वाल सघन,
साँसों में पाता जन्म पवन,
पड़ जाती मेरी दृष्टि जिधर,
हँसने लगती है सृष्टि उधर!
मैं जभी मूँदता हूँ लोचन,
छा जाता चारों ओर मरण।

‘बाँधने मुझे तो आया है,
जञ्जीर बड़ी क्या लाया है?
यदि मुझे बाँधना चाहे मन,
पहले तो बाँध अनन्त गगन।
सूने को साध न सकता है,
वह मुझे बाँध कब सकता है?

‘हित-वचन नहीं तूने माना,
मैत्री का मूल्य न पहचाना,
तो ले, मैं भी अब जाता हूँ,
अन्तिम सङ्कल्प सुनाता हूँ।
याचना नहीं, अब रण होगा,
जीवन-जय या कि मरण होगा।

‘टकरायेंगे नक्षत्र-निकर,
बरसेगी भू पर वह्नि प्रखर,
फण शेषनाग का डोलेगा,
विकराल काल मुँह खोलेगा।
दुर्योधन! रण ऐसा होगा।
फिर कभी नहीं जैसा होगा।

‘भाई पर भाई टूटेंगे,

विष-बाण बूँद-से छूटेंगे,
वायस-श्रृगाल सुख लूटेंगे,
सौभाग्य मनुज के फूटेंगे।
आखिर तू भूशायी होगा,
हिंसा का पर, दायी होगा।'

थी सभा सन्न, सब लोग डरे,
चुप थे या थे बेहोश पड़े।
केवल दो नर न अघाते थे,
धृतराष्ट्र-विदुर सुख पाते थे।
कर जोड़ खड़े प्रमुदित,
निर्भय, दोनों पुकारते थे 'जय-जय'!

भगवान दुर्योधन को समझाने गए और उसने भगवान की बात नहीं मानी, तब यह रण तो अवश्यम्भावी था इसलिए भगवान अर्जुन से कहते हैं, अरे! तू युद्ध से डरता है! तू मृत्यु से क्यों डरता है? मृत्यु तो केवल कपड़े बदलना है। अन्दर की आत्मा तो अजर अमर है।

2.11

श्रीभगवानुवाच अशोच्यानन्वशोचस्त्वं(म्), प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च, नानुशोचन्ति पण्डिताः॥2.11॥

श्रीभगवान् बोले - तुमने शोक न करने योग्य का शोक किया है और विद्वत्ता (पण्डिताई) की बातें कह रहे हो; (परन्तु) जिनके प्राण चले गये हैं, उनके लिये और जिनके प्राण नहीं गये हैं, उनके लिये पण्डित लोग शोक नहीं करते।

विवेचन- भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! तुम समझदार होकर भी, नासमझ जैसी बातें कर रहे हो। तुम ऐसे बोल रहे हो जैसे तुम ही सारे संसार का संरक्षण कर रहे हो, जैसे तुम ही सबके जन्मदाता हो और तुम ही इनके मृत्युदाता। **परिवर्तन तो जीवन का नियम है। जिसने इसको जान लिया वह जन्म और मृत्यु पर शोक नहीं करते।**

2.12

न त्वेवाहं(ञ्) जातु नासं(न्), न त्वं(न्) नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः(स्), सर्वे वयमतः(फ्) परम्॥2.12॥

किसी काल में मैं नहीं था (और) तू नहीं (था) (तथा) ये राजा लोग नहीं (थे), यह बात भी नहीं है; और इसके बाद (भविष्य में) (मैं, तू और राजा लोग) हम सभी नहीं रहेंगे, (यह बात) भी नहीं है।

विवेचन- यहाँ पर हमारे ज्ञानेश्वर महाराज जी भी बहुत अच्छी बात समझाते हैं कि यह जीवन वैसा ही है जैसे पानी में तरङ्गे उठती हैं। जब हवा का तेज झोङ्का आता है तो पानी हिलने लगता है। कभी ऊपर होता है, कभी नीचे की ओर, तो उसमें तरङ्गे उत्पन्न होती हैं और फिर पानी में ही विलीन हो जाती हैं। इसी तरह से यह शरीर भी कुछ ही दिनों का है। यह जहाँ से आया है, उन्हीं पाँच तत्त्वों में मिल जाएगा, परन्तु आत्मा तो अनादि है, सनातन है। **जिस प्रकार तरङ्गों के मिटने पर भी कुछ भी समाप्त नहीं होता, पानी तो पानी ही रहता है, उसी तरह मृत्यु होने पर भी कुछ समाप्त नहीं होता।** भगवान ने कितने सुन्दर तरीके से यह बात को समझायी है! ज्ञानेश्वर महाराज ने पानी और तरङ्ग के उदाहरण से हमें सब सरलता से समझाया है।

2.13

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे, कौमारं(यँ) यौवनं(ञ्) जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिः(र्), धीरस्तत्र न मुह्यति॥2.13॥

देहधारी के इस मनुष्य शरीर में जैसे बालकपन, जवानी (और) वृद्धावस्था (होती है), ऐसे ही दूसरे शरीर की प्राप्ति होती है। उस विषय में धीर मनुष्य मोहित नहीं होता।

विवेचन- भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! परिवर्तन जीवन का नियम है। यह जीवन हर पल बदलता रहता है। अभी जो हम और आप बातचीत कर रहे हैं तो हमारे शरीर की अनेक कोशिकाएँ मर गईं और अनेक नई कोशिकाओं ने जन्म ले लिया। इस प्रकार जीवन हर पल बदलता रहता है। यह सतत् परिवर्तनशील है। हमने जब जन्म लिया तो एक शिशु रूप में थे। फिर बालक बने, फिर कुमार, फिर युवा हुए, फिर प्रौढ़ हुए, फिर वृद्ध और फिर मृत्यु को प्राप्त हो गए। मृत्यु अटल है, यह केवल देहान्तरण की प्रक्रिया है। धीर मनुष्य इससे विचलित नहीं होते हैं। हमारे यहाँ तो मृत्यु से डरने की परम्परा ही नहीं है।

अलाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया तो रानी पद्मिनी ने अपनी अनेक सहेलियों के साथ जौहर कर लिया। वे मृत्यु से नहीं डरीं और अपने आप को अग्नि को समर्पित कर दिया। छत्रपति सम्भाजी महाराज को औरङ्गजेब ने अनेक यातनाएँ दीं। उनकी जीभ काट ली, उनकी उँगलियों को काट दिया गया। उनके शरीर से खाल उतार कर उस पर नमक रगड़कर उन्हें बहुत ही कष्ट दिये। उनके हाथ में कुरान और एक हाथ में तलवार लेकर कहा कि इस्लाम कबूल कर, परन्तु सम्भा जी महाराज ने इन्कार कर दिया। वे मृत्यु से नहीं डरे। गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज और उनके पुत्र आनन्दपुर साहब में लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हो गए। आठ साल के बच्चे जोरावर सिंह को पकड़कर इस्लाम कबूल करने के लिए कहा गया। उसने हँसते-हँसते मृत्यु को प्राप्त कर लिया। उनकी दादी गुजरी देवी ने जो कुछ सिखाया था, उसका पूरा पालन किया। मुगलों ने उन्हें दीवारों में चुनवाने का आदेश दे दिया।

दीवार की ईंटे जोरावर सिंह के गले तक आ गईं तो उसने अपने बड़े भाई फतेह सिंह से पूछा, भाई आप मृत्यु सामने देखकर क्यों रो रहे हो? बड़े भाई ने कहा कि मैं मृत्यु से नहीं डरता, मृत्यु मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। मुझे तो फिर जन्म लेकर आना है और फिर इन्हीं से बदला लेना है। मैं तो इसलिए रो रहा हूँ कि मैं तुमसे बड़ा हूँ और मृत्यु पर मेरा अधिकार पहले है, परन्तु तुम्हारे गले तक ईंट आ गई है और तुम मुझसे पहले मृत्यु को प्राप्त कर रहे हो। मुझे इसी बात का दुःख हो रहा है। जोरावर सिंह और फतेह सिंह का बलिदान इस बात की पुष्टि करता है कि हमारे देश के बच्चे-बच्चे में मृत्यु का कोई भय नहीं है और यहाँ अर्जुन अपनों की मृत्यु से डर रहे थे।

2.14

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय, शीतोष्णसुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्याः(स्), तांस्तितिक्षस्व भारत॥2.14॥

हे कुन्तीनन्दन! इन्द्रियों के विषय (जड़ पदार्थ), तो शीत (अनुकूलता) और उष्ण (प्रतिकूलता) - के द्वारा सुख और दुःख देने वाले हैं (तथा) आने-जाने वाले (और) अनित्य हैं। हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! उनको (तुम) सहन करो।

विवेचन- मनुष्य जब इन्द्रियों के अधीन हो जाता है, तब सुख और दुःख की अनुभूति होती है। सुख और दुःख इन्हीं पाँच इन्द्रियों के कारण अनुभव होता है। यदि कान में कुछ अच्छी ध्वनि चली जाए तो बहुत सुख मिलता है। कोई निन्दा कर दे तो मन दुःखी हो जाता है। मुलायम और शीत वस्तु छू जाए तो मन प्रसन्न हो जाता है और कठोर या गर्म वस्तु का स्पर्श होने से मन को कष्ट होता है। नेत्रों से सुन्दर दृश्य दिखे तो मन प्रसन्न हो जाता है और यदि भयावह दृश्य दिखे तो मन दुःखी हो जाता है। यह सब नेत्र इन्द्री के कारण है। नासिका को सुगन्ध मिले तो मन प्रसन्न होता है और दुर्गन्ध मिले तो मन दुःखी होता है। इसी प्रकार जिह्वा पर मीठा पदार्थ रख दिया जाए तो मन प्रसन्न हो जाता है और यदि करेले की सब्जी या कोई कड़वा पदार्थ खाया जाए तो मन दुःखी हो जाता है।

सर्दियों के मौसम में, कई बार ऐसा होता है कि हम जल्दी-जल्दी में गीजर का बटन चलाना भूल जाते हैं और जब नहाना शुरू करते हैं तब पता चलता है कि पानी तो बहुत ठण्डा है। पहले तो नहाने में बहुत डर लगता है, पर धीरे-धीरे जब शरीर पर वही

ठण्डा पानी डाला जाता है तो दो-तीन मग डालने के बाद ठीक लगने लगता है। ठण्ड में हरिद्वार में गङ्गा स्नान करने जाते हैं तो पहले तो बहुत ठण्ड लगती है और पानी में जाने में भी डर लगता है, परन्तु एक बार स्नान प्रारम्भ करने के बाद बहुत आनन्द आता है और मन करता है कि इसमें से निकलें ही नहीं। वही ठण्डा पानी, जो पहले दुःख दे रहा था अब सुख देने लगता है।

2.15

यं(म्) हि न व्यथयन्त्येते, पुरुषं(म्) पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं(न्) धीरं(म्), सोऽमृतत्वाय कल्पते॥2.15॥

कारण कि हे पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन! सुख-दुःख में सम रहने वाले जिस धीर मनुष्य को ये मात्रास्पर्श (पदार्थ) व्यथित (सुखी-दुःखी) नहीं कर पाते, वह अमर होने में समर्थ हो जाता है अर्थात् वह अमर हो जाता है।

विवेचन- हमें जीवन में धीर मनुष्य बनना चाहिए। जीवन मृत्यु को समान समझना चाहिए। यदि मृत्यु के समय जीवन की इच्छा हमें कष्ट देती रही और दुःखी मन से हम इस शरीर को छोड़ेंगे तो अगले जन्म में भी हमारी आत्मा दुःखी मन से दूसरे शरीर में प्रवेश करेगी। शरीर के सुख-दुःख से हमें विचलित नहीं होना चाहिए। कई बार हमें ऐसे लोग मिलते हैं जो हर वक्त अपने दुःखों का रोना ही रोते रहते हैं। हमें कुछ लोग ऐसे भी मिलते हैं, चाहे उन्हें कितनी भी बीमारियाँ हों, कितने भी कष्ट हों, फिर भी उनके चेहरे पर हँसी रहती है। जो भगवान के भक्त हैं, जिन्हें श्रीमद्भगवद्गीता समझ में आ गई है, वे हर हाल में खुश रहते हैं। आप उनसे कभी भी मिलें, कभी भी पूछें तो वे हमेशा यही कहेंगे कि मैं मस्त हूँ।

श्रीमद्भगवद्गीता पराक्रम करना सिखाती है। सुख दुःख में सम रहना सिखाती है और हर हाल में खुश रहना सिखाती है।

भगवान शङ्कराचार्य जी कहते हैं-

भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् मूढ़मते।
सम्प्राप्ते सन्निहिते काले, न हि रक्षति डुकृञ् करणे।।

भगवान शङ्कराचार्य जी को एक वृद्ध व्यक्ति मिला जो संस्कृत व्याकरण सीखने का प्रयास कर रहा है। जिसके बाल भी सफेद हो गए हैं और दाँत भी टूट गए हैं, इस अवस्था में भी वह भगवान को भजने के बजाय व्याकरण सीखने में लगा हुआ है। उसे शङ्कराचार्य जी कहते हैं कि अब तो रुक जा भैया नहीं तो-

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं,
पुनरपि जननी जठरे शयनम् |
इह संसारे बहु दुस्तारे,
**कृपयाऽपारे पाहि मुरारे **

अर्थात पुनः जन्म और मरण के चक्कर में पड़ना पड़ेगा। फिर से माँ के गर्भ में जाना होगा और प्रसव पीड़ा सहनी पड़ेगी। इसलिए अब तो भगवान का भजन कर ले।

वैसे देखा जाए तो सुख और दुःख दोनों ही नश्वर है। कभी किसी प्रिय व्यक्ति का निधन हो जाए, पहले दो-तीन दिन तो बहुत रोना आता है फिर बारह, तेरह दिन तक लोग मिलने आते रहते हैं तो आवेग उठता है और रोना रहता है। फिर धीरे-धीरे जब सब अपने काम में लग जाते हैं तो दुःख धीरे-धीरे कम होने लगता है। विस्मरण होने लगता है और दो-चार साल के बाद पूरा दुःख निकल जाता है। दुःख की वह मात्रा जो पहले दिन अपने चरम पर थी, धीरे-धीरे कम होती जाती है और अन्त में दुःख निकल जाता है। इस प्रकार यह दुःख भी नश्वर है, परन्तु जिसको निकालने में दो-तीन साल लगते हैं, वह दो-तीन पल में भी निकल सकता है। इसका अनुभव हमने कोरोना काल में किया है। एक प्रशिक्षक के पिता का कोरोना से निधन हो गया और उनका शव भी घर तक नहीं ला पाए। अगले दिन हमने देखा कि वह गीता पर कक्षा ले रहीं थीं। हमने पूछा की आपको दुःख

नहीं हुआ? उन्होंने कहा कि हम उनके अन्तिम दर्शन भी नहीं कर पाए। हम उनके लिए गीता का पाठ करें वह अधिक उत्तम है। वह बोलीं इसलिए मैंने निश्चय किया कि मैं अपने दुःख को रोक कर श्रीमद्भगवद्गीता सिखा कर ही रहूँगी। भगवद्गीता जब सीखते हैं, सिखाते हैं तो यह जीवन में आने लगती है। गीता पढें, पढ़ायें जीवन में लायें। इस सुख और दुःख को हमें समान मानना चाहिए।

2.16

नासतो विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तः(स्), त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥2.16॥

असत् का तो भाव (सत्ता) विद्यमान नहीं है और सत् का अभाव विद्यमान नहीं है, तत्त्वदर्शी महापुरुषों ने इन दोनों का ही तत्त्व देखा अर्थात् अनुभव किया है।

विवेचन- दूध और पानी को एक साथ मिला दिया जाए तो राजहंस दूध अलग कर देता है और पानी अलग छोड़ देता है, सुनार अशुद्ध सोने को तपाता है। उसमें से अशुद्धियाँ दूर कर देता है और शुद्ध सोना अलग कर देता है। दही में से मक्खन निकालने की कला एक गृहिणी जानती है। दूध में पानी दिखाई नहीं देता है। दही में मक्खन और सोने में अशुद्धि नहीं दिखती है, परन्तु जैसे ही सोने को तपाया जाता है या दही को मथा जाता है, सब अलग-अलग हो जाता है। धान को फटक कर गृहणी उसमें से भूसा अलग निकाल देती है। वैसे ही प्रपञ्च में रहकर भी जो ज्ञानी होते हैं वे संसार से अलग रह सकते हैं। संसार में रहकर भी वह उसमें लिप्त नहीं होते।

हम भी ऐसे ही रह सकते हैं जैसे जल में कमल का फूल रहता है।

जो जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ,
जैसे जल में कमल का फूल रहे,
मेरे सब गुण दोष समर्पित हों,
भगवान तुम्हारे हाथों में ॥

2.17

अविनाशि तु तद्विद्धि, येन सर्वमिदं(न्) ततम्।
विनाशमव्ययस्यास्य, न कश्चित्कर्तुमर्हति॥2.17॥

अविनाशी तो उसको जान, जिससे यह सम्पूर्ण (संसार) व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश कोई भी नहीं कर सकता।

विवेचन- यह संसार अविनाशी है और परिवर्तन यहाँ का नियम है। परिवर्तन आवश्यक है, एक परमात्मा तत्त्व है, जिसके द्वारा यह सब सम्पादित होता है। जिसने उस परम तत्त्व को समझ लिया, कि वह सनातन परम् तत्त्व अविनाशी है, उसका कभी नाश नहीं होता है। वह ऊर्जा है, जो परिवर्तित होती है पर कभी समाप्त नहीं होती। जिस प्रकार पानी ऊपर से नीचे गिरता है और विद्युत में परिवर्तित हो जाता है। पानी में विद्युत पहले से विद्यमान थी परन्तु वह जब नीचे आई और चकरी के द्वारा उसे चलाया गया तो विद्युत अलग हो गई।

इस बात को भगवान ने यहाँ बहुत अच्छी तरह से समझाया है कि यह संसार परिवर्तन के नियम से चलता है और मृत्यु से हमें क्या डरना, ऐसा तुम जान लो।

2.18

अन्तवन्त इमे देहा, नित्यस्योक्ताः(श्) शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य, तस्माद्युध्यस्व भारत॥2.18॥

अविनाशी, जानने में न आने वाले (और) नित्य रहनेवाले इस शरीरी के ये देह अन्त वाले कहे गये हैं। इसलिये हे अर्जुन! (तुम) युद्ध करो।

विवेचन- अरे अर्जुन! जो तुम यह सोच रहे हो कि यह मेरे गुरु हैं, यह मेरे पितामह हैं या मित्र हैं तो तुम ऐसा मत सोचो। तुम क्षत्रिय हो और यह सब आत्माएँ हैं जो गलत कार्य में लग गए हैं। इस युद्ध के द्वारा यह सब मुक्त हो जाएँगे। ये सब मृत्यु को प्राप्त हो जाएँगे। उनकी आत्माएँ शरीर से निकल जाएँगी, परन्तु इन पापियों से संसार को मुक्त करना तुम्हारा काम है, क्योंकि तुम क्षत्रिय हो। अर्जुन युद्ध से भाग रहे थे। भगवान ने उन्हें रोक लिया।

श्रीमद्भगवद्गीता सिखाती है कि भागो नहीं जागो। अर्जुन क्षत्रिय हैं, इसलिए युद्ध करना उनका धर्म है। हमें भी यह देखना होगा कि हमें क्या करना चाहिए? हमारा धर्म क्या कहता है? एक आतङ्की को देखकर सिपाही को उसे गोली मारनी ही है, यही उसका धर्म है। जिस प्रकार कसाब को न्यायाधीश ने मृत्युदण्ड की सजा दी, यह उन न्यायाधीश का धर्म है। इसी प्रकार तू क्षत्रिय है इसलिए तुझे युद्ध करना ही पड़ेगा। भगवद्गीता पराक्रम की बात कहती है। यह भक्ति से पहले शक्ति की बात कहती है। भक्ति की बात तो बारहवें अध्याय में प्रारम्भ होती है, अभी तो यह गीता आपको आपके कर्त्तव्य और आपकी शक्ति का भान कराती है। शरीर का ही नाश होता है, आत्मा तो अजर अमर है। इस युद्ध से कुछ शरीरों का नाश होगा, परन्तु तुम्हें उसके लिए सोचने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए हे अर्जुन! तू तो युद्ध कर।

2.19

य एनं(वँ) वेत्ति हन्तारं(यँ), यश्चैनं(म्) मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो, नायं(म्) हन्ति न हन्यते॥2.19॥

जो मनुष्य इस (अविनाशी शरीरी) को मारने वाला मानता है और जो मनुष्य इसको मरा मानता है, वे दोनों ही (इसको) नहीं जानते; (क्योंकि) यह न मारता है (और) न मारा जाता है।

विवेचन- भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! तुम्हारी दृष्टि उनकी देह पर ही टिकी हुई है। तुम यह अहङ्कार क्यों कर रहे हो कि तुम मारोगे और वह मरेंगे। यह सब तुम्हारे कारण नहीं हो रहा है। वह कब मरेंगे? यह निश्चित है। इस बात का अनुभव हम भी अपने जीवन में कई बार करते हैं।

एक बार कुछ मित्र घूमने के लिए गए। वापस लौटते हुए एक व्यक्ति जिस गाड़ी में बैठ रहा था उसे छोड़कर दूसरी गाड़ी में बैठ गया। लौटते हुए दूसरी गाड़ी का एक्सीडेण्ट हुआ, बाकी सब बच गए परन्तु जिसने गाड़ी बदली थी वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। उस की मृत्यु का समय निश्चित था। उसे जाना था, इसीलिए गाड़ी बदलने की भावना उसके मन में आई। एक व्यक्ति को पता चल गया कि एक निश्चित दिन उसकी मृत्यु होनी है। वह दिन-रात चिन्ता में रहता था। मृत्यु की तिथि में अब एक दिन रह गया तो यमदूत को बताया गया कि वह व्यक्ति हिमालय की चोटी पर मिलेगा।परन्तु उस समय वह व्यक्ति केरल में था। उसने सोचा यहाँ से भाग चलता हूँ, जिससे मृत्यु से बच जाऊँगा। वह विमान में बैठा और हिमालय की चोटी पर पहुँच गया और छुप कर बैठ गया। जब यमदूत वहाँ पहुँचा तो उसे देखकर बोला कि तुम यहाँ कैसे आ गये? तुम इतनी दूर केरल में बैठे हुए थे। मुझे तो परसों ही पता चला और मैं सोच रहा था कि तुम मुझे यहाँ कैसे मिलोगे? मृत्यु जैसी लिखी है, जहाँ लिखी है, वह वैसे ही होनी है। उसकी क्यों चिन्ता करते हो? अर्जुन तुम यह सोच रहे हो कि तुम मारोगे और यह मरेंगे। इस बात को भूल जाओ।

ग्यारहवें अध्याय में भी भगवान कहते हैं -

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथाऽन्यानपि योधवीरान्।
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्।।11.34।।

2.20

न जायते म्रियते वा कदाचिन्, नायं (म्) भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः(श्) शाश्वतोऽयं(म्) पुराणो,
न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥1.20॥

यह शरीरी न कभी जन्मता है और न मरता है (तथा) यह उत्पन्न होकर फिर होने वाला नहीं है। यह जन्मरहित, नित्य-निरन्तर रहने वाला, शाश्वत (और) अनादि है। शरीर के मारे जाने पर भी (यह) नहीं मारा जाता।

विवेचन- हे अर्जुन! यह आत्मा तो अजर-अमर है और यह नित्य रहने वाला है।

2.21

वेदाविनाशिनं(न्) नित्यं(यँ), य एनमजमव्ययम्।
कथं(म्) स पुरुषः(फ्) पार्थ, कं(ङ्) घातयति हन्ति कम्॥2.21॥

हे पृथानन्दन! जो मनुष्य इस शरीरी को अविनाशी, नित्य, जन्मरहित (और) अव्यय जानता है, वह कैसे किसको मारे (और) (कैसे) किसको मरवाये?

विवेचक- जिस प्रकार छाया पर तलवार चलाने से कुछ नहीं होता, किसी का वध नहीं होता। एक घड़े में सूर्य को देखते हैं और उसका पानी यदि गिरा दें तो उसमें से सूर्य नहीं निकल जाता। सूर्य तो अपने स्थान पर सदा विद्यमान रहता है। यदि घड़े को तोड़ दिया जाए तो सूर्य का बिम्ब उसमें से निकलकर वापस सूर्य में विलीन हो जाता है, वह दिखेगा नहीं।

जिस प्रकार मटके के अन्दर भी आकाश होता है और मटके के बाहर भी आकाश होता है। घड़े के फूटने पर दोनों आकाश आपस में मिल जाते हैं और हमें कोई अन्तर दिखाई नहीं देता। हमारे यहाँ परम्परा है कि जब किसी की मृत्यु होती है तो उसका पुत्र घड़े में जल भरता है। चिता की तीन बार परिक्रमा करता है और फिर उस मटके को फोड़ देता है। मटके का जल बह जाता है और उसके अन्दर का आकाश बाहर के आकाश में विलीन हो जाता है। यह सारी प्रक्रियाएँ यही दर्शाती हैं। यह प्रतीकात्मक है, जैसे ही घट टूटेगा, यह शरीर छूटेगा तो हमारी आत्मा परम तत्त्व में विलीन हो जाएगी। सिर्फ कपड़े बदलने की बात है।

2.22

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय,नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही॥2.22॥

मनुष्य जैसे पुराने कपड़ों को छोड़कर दूसरे नये (कपड़े) धारण कर लेता है, ऐसे ही देही पुराने शरीरों को छोड़कर दूसरे नये (शरीरों में) चला जाता है।

विवेचन- इस श्लोक में **यहाँ पर नरोऽपरण शब्द कहा गया अर्थात यह मनुष्यों पर लागू होता है।** केवल मनुष्य ही वस्त्र धारण करते हैं। अन्य प्राणी बिना वस्त्र रहते हैं।

मृत्यु केवल कपड़े बदलना है। पुराने वस्त्रों को त्यागना और नए वस्त्रों को धारण करना। अनेक जातियों में मृत्यु का उत्सव मनाया जाता है। विशेष कर जब नब्बे या सौ वर्ष की आयु में कोई मृत्यु को प्राप्त करता है।

महाराष्ट्र में जब किसी बुजुर्ग व्यक्ति की मृत्यु होती है तो उसकी शव यात्रा में आगे भजन कीर्तन और मृदङ्ग बजाते हुए लोग

चलते हैं। पुष्पों की वर्षा करते हैं। इस तरह हमारे भारत में मृत्यु भी एक उत्सव है।

2.23

नैनं(ञ्) छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं(न्) दहति पावकः।
न चैनं(ङ्) क्लेदयन्त्यापो, न शोषयति मारुतः॥2.23॥

शस्त्र इस (शरीरी) को काट नहीं सकते, अग्नि इसको जला नहीं सकती, जल इसको गीला नहीं कर सकता और वायु (इसको) सुखा नहीं सकती।

विवेचन- यहाँ भगवान कहते हैं कि अर्जुन! चाहे तुम कितने भी अग्नि अस्त्र प्रयोग कर लो, पर तुम इस आत्मा को जला नहीं सकते। चाहे तुम वरुण अस्त्र चलाओ परन्तु यह अपने स्थान से हिलेगा नहीं। चाहे तुम जल अस्त्र चलाओ परन्तु तुम इसे भिगो नहीं सकते। न ही वायु अस्त्र इसे सुखा सकता है। यह सतत् अमर है। सिर्फ शरीर पर ही तुम्हारे अस्त्रों का असर होगा, आत्मा पर कुछ प्रभाव नहीं होगा।

2.24

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयम्, अक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः(स्) सर्वगतः(स्) स्थाणुः(र्), अचलोऽयं(म्) सनातनः॥2.24॥

यह शरीरी काटा नहीं जा सकता, यह जलाया नहीं जा सकता, (यह) गीला नहीं किया जा सकता और (यह) सुखाया भी नहीं जा सकता। (कारण कि) यह नित्य रहने वाला, सबमें परिपूर्ण, अचल, स्थिर स्वभाव वाला (और) अनादि है।

विवेचन- भगवान ने पहले भी यह बात बता दी थी, परन्तु यहाँ पर फिर दोबारा बताई है कि यह आत्मा किसी भी प्रकार से गीला नहीं किया जा सकता, काटा नहीं जा सकता। मालकोंस राग से पत्थर भी गीला हो जाता है, परन्तु वह राग गा कर भी, तुम इसे गीला नहीं कर सकते। समुद्र को सुखा दिया जाए, तब भी यह आत्मा नहीं सूखती।

भगवान ने आत्मा के पाँच विशेषण बताए हैं।

नित्य- अर्थात वह सदा रहने वाली है।
वह सर्वगत है- कालातीत है।
वह अचल है- स्थिर स्वभाव वाला है।
वह अनाहूत है- अर्थात न हिलने वाला है
और वह सनातन है- अर्थात सदा ही रहता है।

इसके पश्चात् प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

: : प्रश्नोत्तर : :

प्रश्नकर्ता- कमलेश शर्मा दीदी
प्रश्न- क्या प्राण और आत्मा अलग हैं?
उत्तर - प्राण अनुभव होते हैं। जब हम साँस लेते हैं, तो श्वास अथवा वायु भीतर जाती है। यदि वह वायु ही होती तो आक्सीजन लगा देने से कोई मरेगा ही नहीं। इस अन्तर वायु को प्राण कहते हैं। वह प्राण शक्ति है। शरीर आत्मा से जिसे सूत्र है जुड़ा हुआ है, वह प्राण है। आत्मा और शरीर का जुड़ाव प्राण रूपी धागे से बँधा है। जब प्राण रूपी धागा टूट जाए, तो आत्मा शरीर से बाहर चली जाती है। आत्मा और प्राण दोनों अलग-अलग हैं।

प्रश्नकर्ता- सुमित भैया
प्रश्न- हम निमित्त मात्र हैं, तो अच्छे बुरे कर्मों के दोषी कैसे हो सकते हैं?
उत्तर- यह सारा संशय अर्जुन को था। अर्जुन कहते हैं कि मैं इन लोगों को कैसे मारूँ? बुरा या अच्छा कर्म भगवान नहीं करवाते हैं। अपनी बुद्धि से अच्छे बुरे का निर्णय करते हैं। शरीर के अवयवों को कार्य करने का आदेश बुद्धि भेजती है। हमारे अन्दर के परमात्मा तो साक्षी हैं, वे अच्छा बुरा नहीं कर रहे हैं। हमारी बुद्धि इन्द्रियों से अच्छा बुरा करवाती है। बुद्धि को मन प्रेरित करता है। मन, बुद्धि अहङ्कार, पञ्चेन्द्रियाँ और पञ्च-तत्त्वों से बना शरीर और कर्मेन्द्रियाँ, यह प्रकृति से आए हैं।

पुरुषोत्तम योग में बताया गया है, पुरुष का अंश परमात्मा से आया, जो साक्षी भाव से है। अच्छे या बुरे का कर्त्ता नहीं है। मृत्यु होने पर पञ्च महाभूत विलीन हो गये। शरीर जला दिया, मन निस्तेज हो गया। मन, बुद्धि, अहङ्कार रह जाते हैं। मन में जो भावनाएँ बची रह गयीं, उनकी पूर्ति हेतु मन आत्मा से चिपक जाता है। अगले शरीर को ढूँढने हेतु, मन आत्मा को गति प्रदान करता है। हमारे अच्छे बुरे कर्म हम स्वयं अपनी बुद्धि से करते हैं। भगवान ने हमें निमित्त नहीं बनाया है। उन कर्मफलों के हम भागी हैं।

प्रश्नकर्ता- जक्का शिवरामदास भैया
प्रश्न- श्रीकृष्ण का विराट रूप देखकर भी दुर्योधन अपना नाश क्यों नहीं समझा? भीष्म व द्रोणाचार्य तो जानते थे।
उत्तर- दुर्योधन का प्रारब्ध उसे समझने नहीं देता।

जब नाश मनुज पर छाता है,
पहले विवेक मर जाता है।

भीष्म पितामह ने अपनी प्रतिज्ञा को दृढ़ता से पालन करने के लिए, विवेक को पीछे छोड़ दिया। पूज्य स्वामी गोविन्ददेव गिरि जी कहते हैं-
भीष्म पितामह विचित्र चरित्र के हैं। वे चतुर्दशी के चन्द्रमा हैं। पूर्णिमा के चन्द्रमा बनने में थोड़ी सी कमी रह गयी। द्रोणाचार्य का दोष यह है कि उन्होंने विद्या को बेचा। अश्वत्थामा को दूध न मिलने से व्यथित होकर वे हस्तिनापुर राज्य के अधीन हो गये। जो गुरु अपनी विद्या को नहीं बेचता, उसका विवेक जागृत रहता है। इतने बड़े-बड़े महापुरुषों का उनकी छोटी-छोटी त्रुटियों से अवमूल्यन हुआ।

प्रश्नकर्ता- राजकुमार भैया
प्रश्न- साङ्ख्ययोग क्या है?
उत्तर- कपिल मुनि द्वारा साङ्ख्ययोग लिखा गया। अपने गन्तव्य पर हम अलग-अलग मार्गों से जा सकते हैं। जैसे भक्तियोग, साङ्ख्ययोग (ज्ञानयोग)।
द्वादश अध्याय में अर्जुन ने पूछा भी है कि भक्तियोग और ज्ञानयोग में से श्रेष्ठ कौन सा है? भगवान ने दोनों को श्रेष्ठ बताया और कहा कि भक्ति का मार्ग सरल है। साङ्ख्य अर्थात् सङ्ख्या। मुख्य सङ्ख्या एक है। बाकी सभी अतिरिक्त हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता हमारे पुराणों का सार है। साङ्ख्ययोग ज्ञानियों के लिए है। वह सामान्य मनुष्य की समझ में नहीं आते। भगवान ने द्वितीय अध्याय में साङ्ख्ययोग को जटिल नहीं किया, सरल कर दिया।

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ।।

श्रीमद्भगवद्गीता का द्वितीय अध्याय मनुष्य को विजयी बनाता है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||